आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ।।
कलि ताती ठांढा हरि नाउ ।।

भाग — 7

आग के भभूके में से चिंगारियाँ निकल कर चारों ओर दूर तक फैल जाती हैं तथा जहाँ भी कोई ज्वलनशील वस्तु या पदार्थ पड़ा हो, उसे जला देती है। इसी प्रकार हमारी आन्तरिक गुप्त मानसिक अग्नि की चिंगारियाँ, हमारे हृदय में से निकल कर, अनेक प्रकार के विचारों, मनोभावों, भावनाओं, वासनाओं, व्याधियों जैसे —

रोष
शिकायत
वैर
विरोध
नफरत
जलन
ईर्ष्या
द्वेष
शक
डर
स्वार्थ
तनाव
लड़ाई
झगड़े
काम

क्रोध

लोभ

मोह

अहंकार

के स्वरूप में चारों ओर फैल रही हैं तथा हम **एक-दूसरे को इस मानसिक अग्नि की 'चिंगारी' लगा रहे हैं।**

इस प्रकार यह 'मानसिक अग्नि' गुप्त रूप में सारी दुनिया में फैल कर 'विराट अग्नि' का **एक 'अग्नि-कुंड'** बनी हुई है। तभी गुरबाणी में गुप्त मानसिक अग्नि को—

'आतस दुनीआ'
'कलि ताती'
'अगन कुंट'
'अगन सोक सागर'

आदि नामों से दर्शाया गया है।

गूझी भाहि जलै संसारा भगत न बिआपै माइआ ।। (पृ. 673)

प्रचंड अग्नि में से अनेक चिंगारियां (sparks) निकल कर फैलती हैं, परन्तु वह चिंगारी जहां गिरती है, उस वस्तु की **ग्रहण शक्ति** अनुसार ही चिंगारी का **प्रभाव** पड़ता है।

इस बात को स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण दिये जाते हैं —

1. यदि चिंगारी, **गैस** (gas) पर जा गिरे, तो बम्ब का धमाका बन जाता है तथा दूर-दूर तक तबाही कर देती है ।

2. यदि चिंगारी, **पैट्रोल** पर जा गिरे, तो तुरन्त आग की लपटें भभक उठती हैं तथा आस-पास की चीजें भी जल जाती हैं ।

3. यदि यही चिंगारी, **लकड़ियों** पर जा गिरे, तो धीरे-धीरे आग लगती है तथा लकड़ियाँ जल जाती हैं।

4. यदि चिंगारी **सूखे घास या कागजों** पर जा गिरे, तब तुरन्त आग लग जाती है, तथा शीघ्र ही घास व कागज़ जल कर राख हो जाते हैं।

5. यदि यही चिंगारी **सीमेंट या पत्थर** पर जा गिरे, तब इसका पत्थर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और चिंगारी अपने आप बुझ जाती है।

6. यही चिंगारी यदि पानी पर जा पड़े, तब पानी पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, अपितु पानी चिंगारी को तुरन्त **बुझा देता है।**

उदाहरण के रूप में, किसी साधू से एक व्यक्ति ने पूछा 'तुम्हारा नाम क्या है?' उसने उत्तर दिया, **'शीतल दास'।**

कुछ समय उपरान्त उस व्यक्ति ने पुनः वही प्रश्न दोहराया तथा, इस प्रकार कई बार उसने वही प्रश्न साधू से पूछा। साधू के हर उत्तर में तल्खी आती गयी, तथा अन्ततः साधू **'शीतल दास'** क्रोधवान होकर, डंडा लेकर, उसके पीछे पड़ गया तथा **'अग्नि दास'** ही **बन बैठा।**

इसी प्रकार एक और कथा है — एक बार **महात्मा बुद्ध** जी को किसी ने बहुत गालियाँ दीं तथा बुरा-भला कहा, परन्तु महात्मा जी बिल्कुल शान्त रहे। जब वह गालियाँ देता-देता थक गया, तो महात्मा जी ने एक कंकर पेश करके कहा, 'यह आप ले लो', उस व्यक्ति ने कहा, 'मुझे नहीं लेना।' तब महात्मा जी ने कहा, 'यदि कोई वस्तु किसी को दी जाये और वह स्वीकार न करे, तब वह वस्तु देने वाले के पास ही रह जाती है। इसलिए जो गालियाँ तुमने मुझे दीं, वह मैंने स्वीकार नहीं की, वे तुम्हारे पास ही रह गयीं!!'

1. **बाहरी असर लेना** — अहम्-ग्रस्त जीव बाहरमुखी होते हैं। इसलिए इन पर बाहरी मायिकी प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। जब हम इस **'आतस दुनिया'** में ही जीते, रहते तथा विचरण करते हैं, तब मानसिक 'अग्नि-शोक-सागर' के ताप या चिंगारियों से बच नहीं सकते।

उपरोक्त उदाहरणों अनुसार हमारे —

तुच्छ विचारों के 'घास-फूस'
व्याधियों की 'लकड़ियों'
तुच्छ रुचियों का 'पैट्रोल'
वासनाओं की 'गैस'

अनुसार ही हमारी ग्रहण शक्ति होती है तथा इस **ग्रहण शक्ति की** भी **कई श्रेणियाँ होती हैं,** जिनके अनुसार हमारे जीवन पर बाहरी चिंगारियों का प्रभाव होता है ।

यह प्रभाव अपनी-अपनी मानसिक दशा पर निर्भर करता है। हमारा मन जितना मैला होगा, उतना ही बाहरी मायिकी उक्साहटों **का प्रभाव अधिक होगा** । जितनी मैल कम होगी तथा दैवीय गुणों की बहुलता होगी, उतना ही बाहरी मायिकी चिंगारियों या उक्साहटों **का प्रभाव कम होगा** या बिल्कुल ही नहीं होगा ।

इस प्रकार तुच्छ रुचियों तथा वासनाओं से मलिन होने के कारण, हमारे मन पर बाहरी मायिकी चिंगारियों का प्रभाव, **गैस या पैट्रोल की भांति, बहुत अधिक होता है तथा हमारा मन 'बम्ब' की भांति फूट पड़ता है ।**

दूसरी ओर कम मलिन मन पर बाहरी चिंगारियों का प्रभाव कम पड़ता है तथा वह कुछ समय पश्चात अपनी पहली दशा में आ जाता है।

गुरुमुख जनों के हृदय, तुच्छ रुचियों तथा वासनाओं से मुक्त होते हैं। उनका 'उनमन', निर्मल नीर की भांति अत्यंत शांत होता है। उन पर बाहरी चिंगारियों का प्रभाव बहुत कम होता है **या बिल्कुल ही नही होता।**

अब हमने अपने-अपने हृदय में निष्पक्ष रूप से **खोज** करनी है, कि हमारे मन की अवस्था—

घास-फूस
लकड़ियों
पैट्रोल
गैस

में से किस प्रकार की है तथा बाहरी मायिकी चिंगारियों का उस पर कैसा प्रभाव पड़ता है?

मायिकी 'आतस दुनिया' में रहते तथा विचरण करते हुए, 'आतस दुनिया' की लपटों में से निकली चिंगारियां हमारे मन पर अवश्य पड़नी हैं। हम इन से बच नही सकते। इन का हमारे मन पर प्रभाव या हमारी—

'ग्रहण शक्ति'

अथवा

प्रभाव लेने की क्षमता (receptivity)

ही हमारे मन की वास्तविक गुप्त अवस्था की **'कसौटी'** है।

चाहे हम अपनी भीतरी गुप्त 'अग्नि' को ढकने या छुपाने के कितने भी यत्न करें या कितने भी 'भद्र-पुरुष' बनने का दिखलावा करें, परन्तु **साधू 'शीतल दास' की भांति,** जब कभी कोई बाहरी चिंगारी लगी, तो हमारी भीतरी गुप्त अग्नि का 'बम्ब' अवश्य ही फूट पड़ेगा तथा हमारे **पाखण्ड का भेद खुल जाएगा** और हमारी वास्तविकता प्रकट हो जायेगी।

यह बात भली-भांति दृढ़ करने की आवश्यकता है, कि हमारे **'मन की मैल' ही, हमारी भीतरी गुप्त मानसिक अग्नि का ईंधन है।** इस ईंधन के प्रकार या रंगत अनुसार ही हमारे मन पर बाहरी मायिकी चिंगारियों का प्रभाव होता है।

जिस प्रकार का ईंधन, हमारे हृदय के आंगन में एकत्रित होगा, उसी अनुसार बाहरी चिंगारियों का प्रभाव भी होगा।

उदाहरणस्वरूप, यदि हमारे घर में कागजों या सूखे पत्तों का ढेर होगा, तो बाहरी चिंगारी से तुरन्त आग जल उठेगी। यदि हमारे अन्दर पैट्रोल या गैस का ईंधन पड़ा होगा, तो बाहरी चिंगारी द्वारा हमारे अन्दर बम्ब फूट पड़ेगा।

ईंधन के बिना आग नही लग सकती। इस लिए, मन के आँगन में, यदि कोई ईंधन ही न हो, तब चिंगारी धरती या सीमेंट पर गिर कर स्वयं ही बुझ जायेगी।

इस लिए यदि हमने बाहरी चिंगारियों से बचना है, तो हमें अपने हृदय में से हर प्रकार की मैल अथवा 'ईंधन' को धीरे-धीरे **निकालना पड़ेगा** तथा मन का आंगन साफ करना पड़ेगा।

2. अन्तःकरण का प्रभाव — हमने पूर्व जन्मों में अपने ख्यालों, आदतों तथा संगत का बहुत अभ्यास किया हुआ है, तभी वे हमारे अन्तःकरण में धँस-बस-समा कर अत्यन्त प्रबल तथा दामनिक बने हुए हैं।

इसी लिए हमारे इस जन्म के ख्यालों, भावनाओं, रुचियों तथा वासनाओं पर, हमारे पिछले अभ्यास किये हुए **शक्तिशाली अन्तःकरण की रंगत का बहुत गहरा तथा तीव्र 'प्रभाव' पड़ता है,** जो हमारे **'जीवन-प्रवाह'** को सही या गलत दिशा में ले जाता है । इसी कारण कई बार जानते-बूझते तथा समझते हुए भी, हमारा मन गलत दिशा की ओर आकर्षित होता है । इसी कारण कई बच्चों का स्वभाव, बचपन में ही बुरी रुचियों वाला होता है ।

पूर्व जन्मों के संस्कार तो हमारे वश से बाहर हैं, परन्तु इस जन्म में जीवन को सही 'दिशा' देना हमारे वश में है, क्योंकि अकाल पुरुष ने जीव को सोचने तथा कर्म करने की स्वतन्त्रता दी है ।

निर्मल जल में भिन्न-भिन्न प्रकार तथा रंगत की वस्तुएँ डालते जायें, तब वह पानी भिन्न-भिन्न वस्तुओं की रंगत ग्रहण करता हुआ, एक मिश्रित घोल (compound solution) बनता जायेगा तथा प्रत्येक वस्तु के मिलाने (addition) पर, उसकी रंगत, स्वाद तथा मिश्रण (composition) परिवर्तित होता जायेगा। इस प्रकार उस 'मिश्रण' की रचना साथ-साथ बदलती जाती है।

ठीक इसी प्रकार हमारे मन के पूर्व संस्कारों के निचोड़ (essence) में, प्रतिक्षण बाहर से ग्रहण किये प्रभाव के अधीन, ख्यालों तथा कर्मों की रंगत द्वारा हमारी 'शख्सीयत' बदलती रहती है। इस प्रकार की रंगत, सुगन्धि या 'भड़ास', प्रतिपल, प्रतिक्षण हमारे ख्यालों या कर्मों द्वारा बदलती रहती है। इस परिवर्तन के जिम्मेदार हमारा मन, मन के ख्याल तथा कर्म ही हैं।

दूसरे शब्दों में, हम अपनी आदतें, आचरण, व्यक्तित्व तथा 'भाग्य' स्वयं ही बना रहें हैं तथा प्रतिक्षण बदल रहे हैं। इसलिए यदि हम अपने आचरण या व्यक्तित्व को बदलना चाहते हैं, तो हमें इनके मूल कारणों पर पहरा देना पड़ेगा। अर्थात अपने ख्यालों तथा कर्मों को उत्तम-पवित्र और श्रेष्ठ 'सीध' देनी पड़ेगी। **उसके लिए अच्छी या बुरी 'संगति' का निर्णय करके दृढ़ता से उस पर पालन एवं अभ्यास करने की आवश्यकता है,** परन्तु यह खेल सरल नहीं।

याद रखने वाली बात है कि जो हमारे मन की रंगत है, वह कई जन्मों के संस्कारों तथा इस जन्म के ख्यालों तथा कर्मों का सामूहिक निचोड़ है। इसको बदलने के लिए भी दृढ़ता तथा लम्बे समय के लिए निरन्तर साधना की आवश्यकता है।

हम अपनी शारीरिक ज्ञान इन्द्रियों — आँख, कान, नाक द्वारा बाहर की 'संगति' का प्रभाव लेते रहते हैं तथा उनके अधीन कर्म करते हैं। इन कर्मों का अभ्यास करते हुए 'आदत' बन जाती है तथा फिर धीरे-धीरे

अन्तःकरण में उतर कर, यह 'स्वभाव' या आचरण बन जाता है। इस सारी क्रिया में **'संगति' का अत्यन्त महत्व है —**

जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ ।। (पृ. 1369)

काहू की संगत मिल जीवन मुकत होइ
काहू की संगत मिल जमपुर जात है। (क. भा. गु. 549)

यदि हम तुच्छ रुचियों वाली संगति करेंगे, तो अवश्य ही हमारे ख्याल तथा कर्म तुच्छ होंगे तथा हमारा 'स्वभाव' उसी प्रकार बदलता रहेगा।

इसी लिए यदि हम अपना 'आचरण' बदलना चाहते हैं, तो सब से पहले 'संगति' की परख या निर्णय करना **आवश्यक** है।

यहाँ याद रखने वाली आवश्यक बात यह है कि संगत कई प्रकार की है—

1. **श्रव्सी संगति** — व्यक्तियों की संगति।

2. **लिखित रचनाओं की संगति** — किताबों या अखबार तथा पर्चों की संगति।

3. **भड़कीली संगति** — जैसे सिनेमा, नाच, जिह्वा या कान के स्वाद आदि।

4. **'पिछली यादों' की संगति** — बुद्धि के तल में उतरे हुए संकल्प-विकल्प आदि।

तुच्छ रुचियों वाली संगति की जब हमें परख हो जाये, तब ही हम अपने मन को तुच्छ रुचियों से रोक कर, उत्तम संगति की ओर प्रेरित कर सकते हैं। यही सब से मूल, आवश्यक तथा कठिन 'खेल' है जो कि उत्तम पुरुषों के मार्ग दर्शन तथा सहायता के बिना अति कठिन है, क्योंकि मन तो अपनी रूचि अनुसार

'मायिकी-आकर्षण' द्वारा सहज ही नीचे की ओर आकर्षित होता रहता है। तुच्छ रुचियों वाली किताबें या पर्चे पढ़ने की अपेक्षा, उच्च धार्मिक किताबों या गुरबाणी पढ़ने की आवश्यकता है, तथा साथ ही मन को तुच्छ रुचि वाले दृश्य सिनेमा आदि से **परहेज करना आवश्यक है।**

इस के अतिरिक्त, जब पुरानी तुच्छ यादें आयें तो तत्काल उनको भुलाना या बदल कर, उच्च तथा अच्छे रुझान की ओर लगाना, एक सरल साधन है।

मन खुटहर तेरा नही बिसासु तू महा उदमादा ।।
खर का पैखरु तउ छुटै जउ ऊपरि लादा ।। (पृ. 815)

यदि यह उद्यम दृढ़ता से तुरन्त न किया जाये तब वह रुचि पुनः अपने पुराने बहाव की ओर बह उठेगी। दूसरे शब्दों में, जब भी मन के सामने तुच्छ विचारों की फिल्म (vulgar film)आये, तब तुरन्त उसकी अपेक्षा, उत्तम विचारों की फिल्म प्रस्तुत की जाये तथा मन को उत्तम सीध दी जाये।

ख्यालों को दबाना या मिटाना कठिन है। परन्तु, इनको उत्तम तथा श्रेष्ठ दिशा की और प्रेरित करना तथा बदलना सरल है।

हमारे मन के ख्यालों के बनने के साधनों में अभ्यास आवश्यक अंग है, क्योंकि अब तक जो हमारी आदतें या आचरण बना है, वह हमारे **लगातार अभ्यास** का परिणाम है, तथा इसको बदलने के लिए भी दृढ़ता पूर्वक निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता है।

ख्यालों तथा ख्यालों से प्रेरित कर्मों को बार-बार दोहराने से अथवा अभ्यास करने से ही ख्यालों को 'शक्ति' मिलती है।

हमारे मन की बाहरमुखी संगति का प्रभाव हमारे दिमाग के लगभग

10,000 अणुओं (cells) पर गहरा तथा पक्का अंक्ति हो जाता है। यह दिमागी सूक्ष्म 'रंगत' हमारे मन में पक्की होती जाती है। इनके सम्पूर्ण प्रभाव को ही 'आचरण' या 'व्यक्तित्व' कहा जाता है। जो क्रिया हम एक बार करते हैं, वही क्रिया दोहराने पर सरल व सहायक हो जाती है। क्योंकि हमारी दिमागी बिजली द्वारा हमारे मन तथा दिमाग की फिल्म पर वह ख्याल या क्रिया अंकित हो जाती है। इस प्रकार हमारे दिमाग के अणुओं पर उसी भांति के ख्यालों की रगड़ से निशान पड़ते रहते हैं तथा उसी भांति के आगे आने वाले ख्यालों के लिए रास्ता बन जाता है।

इसी नियम अनुसार, जितनी बार हम किसी क्रिया को बार-बार दोहराएंगे,उतना ही उस क्रिया के प्रभाव की रंगत अथवा **'राह'** हमारे 'दिमाग' मन तथा शरीर के अन्दर गहरा एवं पक्का होता जाता है, तथा भावी क्रिया को सरल व स्वचालित बनाता जाता है। समयोपरांत हम अपना-अपना अच्छा या बुरा 'आचरण' तथा 'भाग्य' स्वयं ही बनाते रहते हैं, जिन्हें मिटाना कठिन है।

हमारा छोटे से छोटा ख्याल या कर्म अपनी अमिट रंगत या 'दाग' हमारे मन पर छोड़ जाता है। इस प्रकार हमारा कोई ख्याल या कर्म कभी भी व्यर्थ नहीं जाता। उसका अच्छा या बुरा परिणाम हमें किसी समय, किसी न किसी दशा में भुगतना ही पड़ता है।

यद्यपि शराबी हर बार यह कह कर अपने आप को धोखा देता है कि 'चलो, आज के प्याले से क्या फर्क पड़ना है।' परन्तु उसके मन की झूठी तसल्ली के बावजूद प्रत्येक प्याला उसकी नसों तथा रग-रग पर अपना अमिट तथा गहरा प्रभाव छोड़ जाता है। यह बुरा प्रभाव उसकी भावी रुचि जगाने में प्रेरक तथा सहायक बन कर उसके जीवन के लिए हानिकारक बन जाता है।

एक अन्य उदाहरण द्वारा यह तथ्य सरलता से समझा जा सकता है। धरती पर 'पानी गिराने' पर पानी के बहाव से एक 'रास्ता' बन जाता

है। दूसरी बार पानी गिराने पर 'पहले बने रास्ते' द्वारा ही पानी बहेगा, तथा हर बार पानी के बहाव से वह रास्ता चौड़ा तथा गहरा होता जाता है, जैसे पर्वतों से निकले **'झरनें'**। इसी प्रकार हमारे प्रत्येक विचार या कर्म अपने बहाव के लिए हमारे मन में 'रास्ता' या नाली अथवा 'आदत' बना लेते हैं, तथा फिर कुछ समय उपरान्त इन ख्यालों के कर्मों की रंगत की 'झलक' हमारे प्रत्येक चिंतन तथा कर्म द्वारा, **स्वतः ही प्रकट होने लगती है।** इस प्रकार हम अपने ख्यालों तथा कर्मों का 'स्वरूप' **धारण कर लेते हैं**, जिसे व्यक्तित्व (personality) कहा जाता है।

इस प्रकार हमारे मन के—

तुच्छ विचारों

तुच्छ रुचियों

मलिन रंगत

मानसिक ग्लानि

बुरे कर्म

पाप

के लिए, हम **स्वयं ही जिम्मेदार हैं** तथा इनका परिणाम भी हमारे 'जीव' को ही भोगना पड़ता है। जब हमारे मन के अन्दर मलिन ख्याल उत्पन्न होते हैं, तो हम उन्हें और 'घोटते' हैं अथवा 'अभ्यास' करते हैं। इस प्रकार ये तुच्छ विचार हमारे मन की गहराईयों में और 'धँस' जाते हैं तथा फिर कुछ समय उपरान्त हमारे अन्तः करण में बस कर समा जाते हैं तथा हमारा 'स्वभाव' या 'आचरण' बन जाता है, जो मौका मिलने पर 'भड़ास' के रूप में बाहर प्रकट होकर हमारे कर्म या 'भाग्य' बनते हैं।

जब हमें किसी व्यक्ति की 'याद' आती है, तब उसके अच्छे-बुरे गुण-अवगुण हमारे मन के शीशे पर उभर कर आते हैं। यदि किसी

'गुरमुख जन' की याद आये, तब हमारा तन, मन, हृदय श्रद्धा-भाव, प्रीत, प्रेम, रस, चाव, शान्ति तथा आनंद से परिपूर्ण हो जाता है। दूसरी ओर यदि तुच्छ रव्यालों वाले मनमुख की याद आये, जिससे हमें नफरत (allergy) हो, तो तुरन्त हमारा मन-तन-हृदय — ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध तथा नफरत से भर जाता है और मलिन हो जाता है। जिस का प्रभाव हमारी आँखों में, नफरत तथा क्रोध की 'झलक' तथा माथे के 'बल' द्वारा तत्काल प्रकट हो जाता है। कई बार हमारे समस्त तन-बदन में क्रोध तथा घृणा की आग लग जाती है, जिस का प्रभाव बहुत देर तक रहता है तथा हम अपनी लगाई आग की लपटों में जलते रहते हैं ।

हमारी अन्दरूनी रव्याली दुनिया में, उत्तम पुरुष तो कम ही होते हैं तथा वे याद भी कम ही आते हैं। परन्तु तुच्छ रुचियों वाले लोगों की तो हमारी रव्याली दुनिया में **'भीड़'** लगी हुई है, जो हमारी **मानसिक दुनिया में दिन-रात भगदड़ मचाए रखते हैं।** यदि एक मनमुख की 'रव्याली संगति' का उग्र ताप शांत होता है, तो दूसरा मनमुख याद आ जाता है तथा फिर उसी प्रकार नफरत तथा क्रोध की तपिश में से गुजरना पड़ता है। इसी प्रकार हम अपने अंदर, स्वयं बसायी हुई रव्याली दुनिया की नफरत, वैर-विरोध, क्रोध के प्रचंड़ ताप में जलते-भुनते रहते हैं तथा हमारा मन कठोर होता जाता है।

तनु जलि बलि माटी भइआ मनु माइआ मोहि मनूरु ।।
अउगण फिरि लागू भए कूरि वजावै तूरु ।। (पृ. 19)

बाहर की संगति से हम 'अलिप्त' रह कर बच सकते हैं, परन्तु हमारे मन की गहरी तहों में बसायी हुई **रव्याली दुनिया** के प्रभाव से बचना अति कठिन है, क्योंकि यह तो दिन रात हमारी रग-रग में बसी हुई है। जब कभी हमारा मन बाहरी रुझानों से खाली होता है, या कोई उन व्यक्तियों की याद करवा दे, तो हम, आन्तरिक शिकवे-शिकायतों, ईर्ष्या-द्वेष,

वैर-विरोध की गुप्त फाइलें खोल कर , 'रवाह म रवाह' मानसिक दुख, क्लेश, कुढ़न तथा जलन से दुखी होते रहते हैं। इतना ही बस नही, ऐसी हानिकारक कुढ़न के जहर को बार-बार 'घोटने' से मन तथा अन्तःकरण में यह **मानसिक ग्लानि,** और अधिक धँसती जाती है तथा बसती जाती है। जिस से मन जल-भुन कर **कठोर होता जाता है तथा उत्तम आत्मिक विचारों को ग्रहण करने में असमर्थ हो जाता है** और अगले जन्मों में भी यह जहरीली ग्लानि **साथ जाती है।**

ऐसी 'मानसिक ग्लानि' में से तुच्छ ख्याल, तुच्छ रुचियों, तुच्छ कर्म तथा पाप ही उत्पन्न होते हैं। यदि कोई अच्छे ख्याल या पुन्य करते भी हैं, तो वह भी अहम्ग्रस्त ही होते हैं ।

हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु ।।
हउ विचि पाप पुंन वीचारु ।।
हउ विचि नरकि सुरगि अवतारु ।। (पृ. 466)

ऊपर दर्शायी मानसिक ग्लानि की प्रचंड अग्नि में सारी दुनियां जल रही है ।

गूझी भाहि जलै संसारा भगत न बिआपै माइआ ।। (पृ. 673)

अगनि कुटंब सागर संसार ।।
भरम मोह अगिआन अंधार ।। (पृ. 675)

हमारे मानसिक तथा धार्मिक जीवन का व्यवहार, गुरबाणी के आशय के ठीक **विपरीत** हो रहा है । जिस बात को हमने **'भूलना'** है, उसी बात को **'याद करके'** घोट कर, अभ्यास करके दृढ़ करते रहते हैं । इस के विपरीत जिस बात को याद करना है, अभ्यास करना है, दृढ़ करना है, उसे बिल्कुल **'भुलाये' बैठे हैं** या उस से लापरवाह एवं मस्त हुए बैठे हैं ।

जो पराइओ सोई अपना ।।
जो तजि छोडन तिसु सिउ मनु रचना ।। .....
झूठु बात सा सचु करि जाती ।।
सति होवनु मनि लगै न राती ।। (पृ. 185)

गुरू साहिबान ने इस आवश्यक तथ्य के विषय में यूँ प्रेरणा तथा मार्गदर्शन किया है —

देख कर अनदेखा करना
सुन कर अनसुना करना
'रोस न काहू संग करहु'
'दइआ छिमा तन प्रीत'
हथहु दे कै भला मनाए'
'अणहोंदा आप वंडाइ'
'निंदा भली किसे की नाही'
'पर का बुरा न राखहु चीति'
'गुसा मनि न हंढाइ'
'ना को बैरी नही बिगाना'
'सगल संगि हम कउ बन आई'।

परन्तु, हमारे दैनिक जीवन का 'व्यवहार' इस के **ठीक विपरीत** दिखायी दे रहा है। इन इलाही उपदेशों का व्यवहारिक रूप में अभ्यास करने के लिए कुछ 'सुझाव' सहायक हो सकते हैं ।

जब कभी ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह, घृणा, निंदा आदि तुच्छ वासनाओं वाले ख्याल उत्पन्न हों तब उन्हें **उसी समय तुरन्त—**

'कोई न' कह कर
'चलो जाने दो' कह कर
भुला कर

किसी अन्य उत्तम विचार की ओर **ध्यान मोड़ दिया जाये** तथा अपने 'चिंतन' में से उस मलिन कल्पना को मिटाने की कोशिश की जाये ।

जरूरी नुक्ता यह है कि तुच्छ रुचि वाले संकल्प या विचार को **यदि तत्काल —**

टाला न गया
भुलाया न गया
मन की तख्ती से मिटाया न गया,

तो वह तुच्छ संकल्प या ख्याल, हमारे मन में —

1. बार-बार याद आयेगा ।
2. दोहराया जायेगा ।
3. अभ्यास होता जायेगा ।
4. अन्तःकरण में धँस-बस कर समा जायेगा ।
5. अन्तःकरण मैला होता जायेगा ।
6. इस ग्लानि का जहर बढ़ता जायेगा ।
7. आन्तरिक गुप्त अग्नि में जलते-सड़ते रहेंगे ।
8. सहज-स्वभाविक ही 'पाप' होते रहेंगे ।
9. यम के 'घेरे' में आ जायेंगे ।
10. उत्तम पवित्र भावना से रिक्त तथा कठोर हो जायेंगे ।
11. यम के वश हो जायेंगे ।

12. लोक-परलोक व्यर्थ खो कर, आवागमन के चक्र में फंसे रहेंगे।

इस प्रकार हमने **ईश्वर की बनायी हुई —**

'सुन्दर दुनिया'

को

'आतिश दुनिया'

बना दिया है।

(क्रमशः .....)